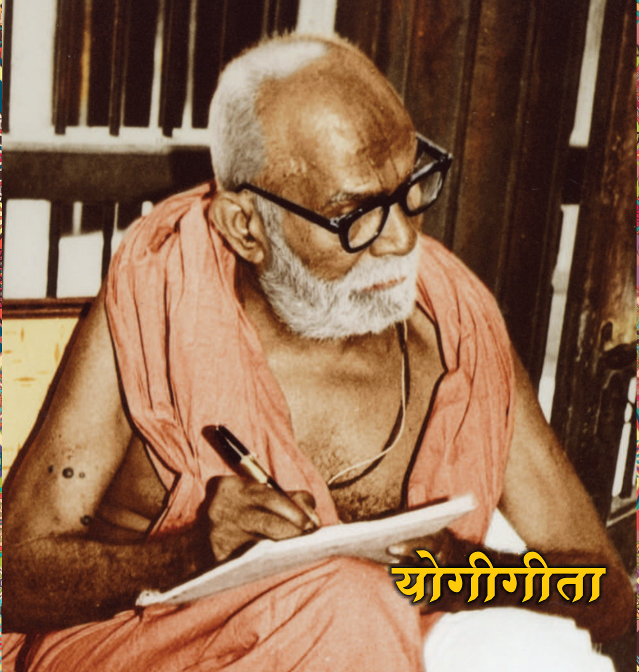

योगीगीता

॥ जय स्वामिनारायण ॥

योगीगीता

[वर्षों पूर्व–शुक्रवार ता. 28.3.1941 के दिन गुरुहरि स्वामिश्री योगीजी महाराज ने एक पत्र लिखा था। जिसका उद्देश्य था – जीतेजी मोक्ष कैसे पाएँ और ब्रह्मरूप कैसे हो सकते हैं –यह श्रेयार्थी साधकों को स्पष्ट करना।

हम अपने जीवन में यदि एक नया मोड़ लाना चाहते हैं, शांति पाना चाहते हैं, अपना जीवभाव छोड़ कर, ब्रह्मभाव की ओर गति करना चाहते हैं, तो हमारे आचरण में क्या परिवर्तन लाना चाहिए – इस बात का पूरा विवरण योगीजी महाराज ने सप्तपदी - सात कदम - सात सोपान - सात वार्ता द्वारा स्पष्ट किया है। **प.पू. काकाजी ने इसे 'योगीगीता' के रूप में नवाज़ा था** और उसी का हिन्दी अनुवाद 1981 में प्रकाशित करवाया था। अब इसे पुनः प्रस्तुत कर रहे हैं। इसका नित्य पाठ करके जीवन में ढालेंगे... तो, भगवत्स्वरूप संत की प्रसन्नता से हम ब्रह्मरूप हो जाएँगे।]

28.3.41, शुक्रवार

श्रीजी स्वामी सत्य हैं

वचनामृत में से पाँच मुख्य बातें –

1. करना – संतसमागम (मन, कर्म, वचन से)।
2. जानना – जड़-चैतन्य का विवेक।
3. छोड़ना – पंचविषय, देहाभिमान, गलत पक्ष।
4. समझना (पहचानना) – भगवान का स्वरूप।
5. रखना – ब्रह्मरूप होकर परब्रह्म।

भगवान की भक्ति करने में तीन बड़े विघ्न हैं; वे निम्नलिखित हैं –

मुक्तानंदस्वामी का प्रश्न है। *(वचनामृत गढडा अंत्य प्रकरण 8)*

1. अपने दोषों को देखें नहीं।

2. भगवान के भक्त से मन अलग हो जाए।

3. भगवान के भक्त के प्रति लापरवाही हो जाए।

मुक्तानंदस्वामी का प्रश्न – वचनामृत अंत्य. प्रकरण 5 :

माहात्म्ययुक्त भक्ति उदय होने का क्या साधन है ?

श्रीजी महाराज का उत्तर है –

शुक-सनकादिक जैसे बड़े संत की सेवा और उनके 'प्रसंग' से माहात्म्ययुक्त भक्ति जीवों के हृदय में उदय होती है। माहात्म्यरहित भक्ति क्षय रोग युक्त है। जैसे दस साल की किसी लड़की को क्षयरोग हो जाए, तो वह युवती होने से पूर्व ही मर जाती है; वैसे ही माहात्म्यरहित भक्ति क्षीण हो जाती है। वचनामृत सारंगपुर 5।

पहली बात –

निर्दोषबुद्धि हर एक में रखना – यही हमारी सेवा है। गढडा मध्य 28 के वचनामृत में (लिखा है) – भक्त का भक्त बनना।

वचनामृत गढडा प्रथम 58 – पक्का हरिभक्त किसे जानना? हरिभक्त के दास का दास होकर रहना।

वचनामृत गढडा मध्य 62 – तीन अंग में से एक अंग रख कर, देहभाव छोड़ कर भगवान के धाम में जाना। आत्मनिष्ठा की उत्तम (स्थिति), पतिव्रतात्व, दासत्व। दासत्व में चार बातें समझनी हैं:

1. इष्टदेव के दर्शन जँचे,
2. इष्टदेव के सान्निध्य में रहना जँचे,
3. इष्टदेव की क्रिया जँचे

और

4. **अपने इष्टदेव** का स्वभाव जँचे।

ये चार बातें समझनी हैं। ये बातें समझ कर, जीव में उतारना।

दूसरी बात –

एक दूसरे की **झंझट** नहीं करनी। **एक की बात दूसरे को करना और दूसरे की बात अन्य को करना, यह स्वभाव साधुता के मार्ग में खोट** लाएगा। अतः जिसे **मोक्ष** चाहिए, उसे यह स्वभाव छोड़ देना चाहिए।

तीसरी बात –

स्वामी जागास्वामी कहते थे कि यदि दुर्गुण (दोष) देखने का मन हो, तो अपनी देह का, अपने स्वभाव का और अपनी जाति का देखना, किन्तु ब्रह्मस्वरूप एकांतिक भगवान के भक्त का दुर्गुण नहीं देखना।

चौथी बात –

‘सहनशक्ति’ – यह जबरदस्त गुण है। कोई कटाक्ष में कुछ कहे, तब भी उत्तर देने के बजाय सहन कर लेना – इसे कहते हैं क्षमा गुण! क्षमा करने से हमारे हृदय में शांति अखंड आती है, आनंद के फव्वारे उठते हैं और **बड़े (संत) हम पर अंतर से राज़ी होते हैं।** स्वामी मूल अक्षरब्रह्म कहते थे – *‘देहांत हुआ’ उससे क्या? (हमें तो) साधु होना है, साधुता सीखनी है। ‘मर गए, सो पूरा हुआ और कुछ करना बाकी नहीं रहा’ – ऐसा नहीं समझना।* स्वामी जागाभक्त स्वामी कहते थे – *पर क्रिया, पर आकार और पर दोष हमारे भीतर नहीं आने देना।* स्वामी कहते थे – कहीं बात होती हो, तब अपने लिए जो ठीक लगती हो, इतनी ग्रहण करनी और बाकी बातें छोड़ देनी; (सोचना) कि ये बातें और भक्त के लिए हैं, मेरे लिए नहीं हैं। इससे ‘हमने उनका अवगुण लिया’ – ऐसा दोष हम पर नहीं आएगा।

पाँचवी बात –

समूह में यदि कोई बात हो रही हो और हम से कोई बड़ा व्यक्ति वह कह रहा हो (और वह बात हमें उचित न लगे), तो उनकी बात उस समय सुन लेनी और उनके अंतर में जब हमारे प्रति लगाव हो, तब बात करनी। प्रथम लगाव कराना सीखना। लगाव होने पर बात भीतर में बैठती है। अतः लगाव होने के बाद अपना सिद्धांत कहना।

छठवीं बात –

'सुहृद्भाव' का बड़ा गुण सीखना। एक-दूसरे की क्रिया आपस में संप से कर लें – वह है सुहृद्भाव। एक-दूजे की 'सेवा' कर लेनी। यदि कोई कुछ कह भी दे, तो **सहन कर लेना** और **दूसरे किसी को कहना भी नहीं** कि *मुझे फलां ने ऐसा कहा। 'अहो! मेरा कितना सद्भाग्य कि ऐसे कहने वाले मुझे*

मिले' – यूँ कहने वाले का गुण ग्रहण करना। **'अंतर में सुहृद्भाव होगा, तो** अन्य अनेक **जबरदस्त गुण (पीछे-पीछे) आएँगे'** – ऐसा स्वामी का वचन है। अतः **सुहृद्भाव अवश्य रखना।**

सातवीं बात –

कथावार्ता का व्यसन रखना। कथावार्ता का व्यसन हो, तो इसके बिना रहा ही न जाए। बड़े संत बात करते हों और हम अनुपस्थित हों, तो दिल में दाह लगना चाहिए। जब कथा सुनें, तब शांति होनी चाहिए। अतः शब्द (स्वाति नक्षत्र में चातक पक्षी वर्षाबिंदु ग्रहण करता है इसी प्रकार) ग्रहण करना सीखना। एक भी शब्द वृथा नहीं जाने देना। नई-नई बातें स्मृति में रखनी। तब ही 'श्रुत' कहा जाता है। अतः सच्चे अर्थ में श्रुत होना।

ये सात बातें अंतर में-गहराइयों में उतार कर-समझ कर प्राप्ति की मस्ती रखना। बातें तो बहुत हुईं; किन्तु संक्षेप में इतना समझना है कि बड़े संत बात करते हों, तब ध्यान से-एकचित्त से सुनना। बीच में बोलना-करना नहीं। बड़े संत के वचन त्वरित ग्रहण कर लेना।

बोलो, स्वामिनारायण की जय।

बोलो, मूल अक्षर स्वामी की जय।

बोलो, शास्त्रीजी महाराज की जय।

लि. सदा सेवक ज्ञानजीवनदासजी

मंगलवार, दि. 1-4-1941

मितभाषी होना। वाणी का उपयोग दूध की भाँति करना, पानी की तरह नहीं करना। बक-बक नहीं करना। यथायोग्य ही बोलना। सत्य, हित और प्रियकर वचन बोलना। सो, सब का हमसे लगाव हो; ऐसा अंग (स्वभाव) रखना।

इतना पाठ करने से शांति रहेगी। शूरवीर बनना; जिससे कि हमारे इन्द्रिय-अंतःकरण हम से निरंतर काँपते रहें और गलत विचार-संकल्प उठ भी न पाएं। वचनामृत अंत्य प्रकरण 2 रात-दिन पढ़ते ही रहना।

ये बातें याद रखना।

पूज्य भगतजी महाराज, पूज्य स्वामी जागाभक्त, पूज्य अदाश्री और पूज्य शास्त्रीजी महाराज को याद करना और नित्य (उनकी) स्मृति रखना।

कोई समझाए – मनाए और हम वेग में हों, तब भी मान जाना। यह जबरदस्त गुण है। अपनी बात पर अड़े नहीं रहना। एक बात सीखनी है – तुरंत मान जाना

और अपना ‘ब्रह्मस्वरूप’ का आनंद एक क्षण भी, कम नहीं होने देना। काम, क्रोधादि के संकल्प उठें, तो ‘ज्ञान’ से उनको दबा देना। *‘अगर मलिन विचार किया, तो तुझे चूर-चूर कर दूँगा’* – (ऐसी शिक्षा अपने मन को देना)। राजनीति का वचनामृत गढडा मध्य 12 पढ़ना। फिर एक भी संकल्प नहीं उठेगा। सांख्य विचार करना। देह, लोक, भोग मिथ्या समझना। नित्य सुबह में यूँ सोचना : *‘मैं गुणातीत हूँ और मेरे भीतर स्वामिश्रीजी साक्षात् बैठे हुए हैं।’* अपने आपको प्रत्यक्ष ब्रह्मस्वरूप मानना, यही विनती है। भूलचूक सुधार कर पढ़ना।

द. साधु ज्ञानजीवनदासजी

चैत्र शुक्ला नवमी, मंगलवार

स्वातिबिंदु

*[ब्रह्मस्वरूप स्वामिश्री शास्त्रीजी महाराज और गुरुहरि योगीजी महाराज का संबंध 'एक श्वास - एक प्राण' का था। दोनों एक ही 'विभूति' थीं। तब भी जगत के सामने दोनों का व्यवहार गुरु - शिष्य का था! दोनों का हृदय भगवान स्वामिनारायण के प्रति श्रद्धा से भरपूर था। दोनों अक्षरपुरुषोत्तम के उत्तराधिकारी और ब्रह्मस्वरूप थे। यही तो ऐक्य था - अद्वैत था! ऐसे एकीभूत हृदय जब आपस में बात करते हैं, तब पारदर्शक हृदय से **'स्वातिबिंदु'** समान मोती टपकते हैं... नितांत शुद्ध, नितांत श्वेत, नितांत सरल! और... इनका मूल्य सामान्य नहीं होता है।*

गुजरात का महेळाव गाँव – ब्रह्मस्वरूप स्वामिश्री शास्त्रीजी महाराज की प्राकट्यभूमि! सन् 1967, 9 दिसंबर के दिन गुरुहरि योगीजी महाराज, संतों और हरिभक्तों के साथ वहाँ गए थे। वहाँ ब्रह्मस्वरूप शास्त्रीजी महाराज की संगमरमर

की मूर्ति के समक्ष योगीजी महाराज खड़े रह गए और उनके गद्‌गद्‌ कंठ से वाणी प्रवाहित हुई, सीधी अंतर से अंतर की ओर! एक चैतन्य दूसरे चैतन्य को विनम्र और प्रार्थनामय स्वर में कुछ कह रहा था। उस समय वहाँ सब को लगा कि योगीजी महाराज संगमरमर की मूर्ति के समक्ष नहीं, अपितु साक्षात्‌ शास्त्रीजी महाराज से बात कर रहे हैं। वह वाणी अमर हो गई, प्रेरक बन कर स्वीकृत हो गई!

मुमुक्षु के चित्त को उजागर करके अध्यात्म चेतना में सुप्रतिष्ठित कर देने वाली ऐसी वाणी अत्यंत महत्त्वपूर्ण, अत्यंत मूल्यवान होती है। वही वाणी ब्रह्मस्वरूप काकाजी महाराज के हाथ आई और... उन्होंने उसकी एक झलक हमारे लिए अलग कर दी थी। हमारे जीवन में तदनुसार यदि व्यवहार आ जाए, तो हम धन्य हो जाएँगे। अतः वह पुनः प्रस्तुत कर रहे हैं।]

हे शास्त्रीजी महाराज!

1. आपके संबंध वाले चाहे कैसे भी हों, हम उन्हें सिर का ताज मानें – ऐसा आशीर्वाद दीजिए।
   ‘तुलसी ज्याके मुखन से...’ उनके साथ मनमुटाव की गाँठ न पड़ जाए; उन्हें हम पहचान पाएँ ऐसी सुबुद्धि दीजिए।
   अपने जैसी सुबुद्धि हमें प्रदान कीजिए।
2. आज प्रार्थना करें और कल पलट जाएँ – ऐसा न हो, यह प्रार्थना है।
3. रात-दिन हम आपसे प्रार्थना करें, आपकी ही स्मृति में रहें, एक क्षण के लिए भी आपको भूलें नहीं... आपके प्रति जो भाव है, वैसा ही भाव आपके भक्तों के प्रति भी रहे, मनुष्यभाव न आए। आप साक्षात् कैवल्यमूर्ति हो, पर आपके भक्तों को भी कैवल्यमूर्ति मान सकें, ऐसे आशीर्वाद दीजिए।

आपके भक्तों के प्रति हमें दिव्यभाव रखवाना।

4. भगवान और संत को हम कभी भी विवश न करें – ऐसी बुद्धि देना। हमारा मन कभी पलटे नहीं। सदा एक (निश्चल) मति रहे, ऐसी प्रार्थना है।

5. कभी भी हम मनमुखी न रहें। मनमुखी (रहना) बाहर से तो बढ़िया गुण दिखाई पड़ता है, किन्तु वह गुण नहीं कहा जाए।

6. ऐसा (भव्य) संबंध हुआ, तो अब हम शोक में परेशान न रहें, ब्रह्मानंद में रहें। हम में क्रोध, दगा, प्रपंच, मान न रहे – यह दीजिए।

7. आप निर्दोषबुद्धि के भूखे हैं।
आपके भक्तों में यदि हम निर्दोषबुद्धि रखेंगे, तो आप हम से प्यार रखेंगे; यदि (निर्दोषबुद्धि) नहीं रखेंगे, तो आप हमें अपने पास फटकने नहीं देंगे (नहीं बैठाएँगे) – दूर कर देंगे।

ब्रह्मस्वरूप प्रमुखस्वामी महाराज की अंत्येष्ठि बेला पर

मेरी जीवनभावना

સ્વામિશ્રીજી

જય સ્વામિનારાયણ !

સૌના ય શિરછત્ર પ.પૂ. પ્રમુખસ્વામી મહારાજે ૧૩મી ઑગસ્ટના શનિવારે અક્ષરધામ તુલ્ય મહાતીર્થ સારંગપુર મંદિરે દેહત્યાગ કર્યો ને ૧૭મીના બુધવારે મંદિરના સંકુલમાં જ પ.પૂ. મહંતસ્વામીજી, પૂ. ડૉક્ટરસ્વામી અને વરિષ્ઠ સંતોએ તેઓશ્રીના અંત્યેષ્ટિ કરી, જેના અમ સહુએ ત્યારે [illegible] ને અશ્રુભીની આંખે ટી.વી. પર દર્શન કર્યાં.

આવી ઘટનાઓ સાંભળતા કે નિરખતા એમના સાથેના આપણા સંસ્મરણો સ્મૃતિપટ પર સહજ જ ઉભરી આવતા હોય છે ને સાથોસાથ આપણા આવા આધાર કે અવલંબન ગુમાવ્યાની કલ્પના કરતાં જ આપણું સમગ્ર તંત્ર એકદમ વિહ્વળ થઈ જતું હોય છે.

પ.પૂ. કાકાજી સ્વધામ સિધાર્યા ત્યારે જૂના જોગીઓએ મને આવી અવસ્થામાં જોયો છે જ. પણ, આપણાં અન્ય ગુણાતીત સ્વરૂપો અને આત્મીય મુક્તોની હૂંફે સ્વસ્થતા આવી ને ગુણાતીતસ્વરૂપે પ.પૂ. કાકાશ્રીનું સતત સાન્નિધ્ય અનુભવતાં ને એમને એમની કૃપે જ આપણાં કાર્યો

કરતાં દેખી, એમના સ્થૂળ સ્વરૂપની ઉણપ ન સાલતા, ધરપત રહી કે એમના પદચિન્હે ચાલવાની - ચાલતા રહેવાની સૂઝ પણ ગમતી રહી. તો, ગમે તેવા સંજોગોમાં - ગમે તે પ્રસંગો પ.પૂ. કાકાશ્રીની ઉણપ ક્યારે ય ન વરતાય ને એમનું સાન્નિધ્ય સતત્ અનુભવાય તે માટે નીચેના પાંચ મુદ્દાઓ પકડી રાખીએ:

1. અક્ષરપુરુષોત્તમની શુદ્ધ યુગલ ઉપાસના.
2. આપણી અંતરો-અંતરની એકતા.
3 સમગ્ર ગુણાતીત સમાજમાં સર્વદેશીય સમરસતા.
4. આપણો સ્વધર્મ - આપણી મર્યાદા.
5. ગુરુ વચનનું રોજનું ભજન

આ પાંચ મુદ્દા પકડી રાખીશું, તો મૂળ અક્ષરમૂર્તિ ગુણાતીતાનંદસ્વામીના આલંબન પ્રમાણે પ.પૂ.કાકાશ્રી ગયા કે દૂર છે, એવું મનાશે જ નહીં.

1. અક્ષરપુરુષોત્તમની શુદ્ધ યુગલ ઉપાસના:

પૂર્વના બળિષ્ઠ સંસ્કારે કરીને જાગૃતસ્વરૂપ સંતે આપણને જોયાં લીધાં અને હેતનિષ્ઠાએ આપણે તેઓ સાથે જોડાયા. જો કે તે વેળા આપણે ભગવાન ભજવા છે - સાધવા છે એવું કંઈ નિશાન - ધ્યેય

જોયું. પણ, જેમ-જેમ પ્રગટ સત્પુરુષોની વાતો-કથાવાર્તા સાંભળી,
તેમ-તેમ હૃદય સમજતું ગયું - સ્પષ્ટ થતું ગયું
એક વાત ચોક્કસ છે કે બ્રહ્મભાવે કરેલ સેવા-ભક્તિ જ પરબ્રહ્મને-
ભગવાનને પહોંચે છે - ભગવાન સ્વીકારે છે.

બ્રહ્મભાવમાં - નિર્ગુણભાવમાં સ્થિત રહેવા, પ્રગટ બ્રહ્મસ્વરૂપ સંતનો
સંબંધ - એમનો સંગ નહીં, પ્રસંગ અનિવાર્ય છે. એ સિવાય
ગમે એટલા વ્રત, તપ, તીર્થાટન, દાન, યોગ, યજ્ઞ જેવા સાધનો
કરીએ, એ આપણને 'સાત્ત્વિકભાવ' સુધી લઈ જાય, પણ આપણો
જીવ 'બ્રહ્મરૂપ' નહીં થાય.

બીજી બાજુ, પ.પૂ. કાકાજી તો કહેતાં —
'બ્રહ્મસ્વરૂપ સંતના વચને તમે ઘંટડી વગાડો, એ તમે આત્મસત્તા
રૂપે - બ્રહ્મરૂપે વર્ત્યા!'

સાકાર બ્રહ્મના સંબંધે 'બ્રહ્મ' થયેલા - બ્રહ્મસ્વરૂપ થયેલા સંતો કે
જેમણે પરબ્રહ્મને - ભગવાનને સાંગોપાંગ ધારણ કર્યા - એવા સંતોની
એક પરંપરા ભગવાન સ્વામિનારાયણે મૂળ અક્ષરમૂર્તિ ગુણાતીતાનંદ
સ્વામી દ્વારા અખંડ રાખી.

અક્ષરપુરુષોત્તમની યથાર્થ ઉપાસનાના મંદિરો કર્યાં, અક્ષર અને પુરુષોત્તમની મૂર્તિઓ પધરાવી ગુરુવર્ય શાસ્ત્રીજી મહારાજે આ સત્ય સ્થાપત્યમાં મૂર્ત કર્યું તો, બુદ્ધિશાળી એ જ કે જે આ સત્યને પકડી લે.

માટે, જેને ભગવાનને (પરબ્રહ્મ નારાયણને) આનંદ ધારવા હોય-રાખવા હોય, એણે બ્રહ્મરૂપ થવા અનન્યભાવે અક્ષરપુરુષોત્તમની ઉપાસના કરવી રહી, રહી ને રહી. અને આપણ સહુને હવે આ વાત ગળે ય ઊતરી ગઈ!

૨. <u>આપણાં મંદિરો-મંદિરની એકતા:</u>

પહેલાં કહેવાતું – 'ધર્મ, જ્ઞાન, વૈરાગ્યે યુક્ત ભક્તિ જેમાં હોય એ એકાંતિક ભક્ત.'

પ.પૂ. યોગીબાપાએ સૂત્ર આપ્યું – 'એકતા એ જ એકાંતિકપણું!'

પ.પૂ. કાકાશ્રીએ એ પકડ્યું ને આદર્શરૂપે કુટુંબભાવે પૂ. કાંતિકાકા સાથે એવી એકતાથી જીવનપર્યંત જીવી એકાંતિકપણાની માર્ગે ચાલવાની નવી ને અદ્ભુત કેડી આપણને કંડારી આપી. પ.પૂ. કાકાશ્રી સાહેબના હેતે આપણને આ વાત મનાઈ ને આપણે સહુ એ માર્ગે

કુટુંબભાવે અગ્રેસર રહ્યા ને આવા સ્વરૂપલક્ષી સુહૃદભાવે — આવી એકતાએ કરીને આંતર કે બાહ્ય કોઈ માયા આપણને નડી નથી.

મૂળ અક્ષરમૂર્તિ ગુણાતીતાનંદ સ્વામીએ જૂનાગઢમાં મંદિરના સંતો-સેવકોને આશીર્વાદ આપેલા —

'તમે સર્વે સાધુ, પાળા, બ્રહ્મચારી આમ ને આમ સંપ રાખશો, તો ગમે તેવો અંતરશત્રુ તમોને પરાભવ કરશે નહીં ને આમ નહીં રહો, તો અભય જેવો હોય પણ તમને સત્સંગમાંથી બહાર મૂકી નાખશે.'

સ્વામીના આ આશીર્વચન શાશ્વત છે.

3. <u>સમગ્ર ગુણાતીત સમાજમાં સર્વદેશીય સમભાવના:</u>

બ્રહ્મને - ગુણાતીતને કોઈ મર્યાદા નથી. એ સર્વત્ર - સર્વવ્યાપક છે. આ હવે આપણે સમજતા થયા છીએ. તેથી, એમના સંબંધે સુહૃદભાવ પણ સીમિત રહેતો નથી.

માટે, સમગ્ર ગુજરાતના સમાજમાં, ભલે સંજોગ ને પરિસ્થિતિને કારણે જુદા-જુદા રહેતા હોઈએ, પણ આ આપણાં ને આ બીજાં, આ ગામનાં ને આ નહીં ગામનાં એવી કોઈપણ પ્રકારની ભેદદૃષ્ટિ વગર, સર્વદેશીય વલણ રાખી, કુટુંબભાવે સહુને આપણાં જ માની, આધ્યાત્મિક ને ધાર્મિક ગુજરાતના સમાજના સહુ જુવાનો સાથે સમરસ થઈએ - એ આપણો પરમેશ્વર કૃપાળુના.

૪. <u>આપણો સ્વધર્મ - આપણી મર્યાદા:</u>

આ માર્ગે ચાલનારા જુવાનો માટે પોતાના આશ્રમના સ્વધર્મની મર્યાદા અત્યંત આવશ્યક છે. એ વિના ઈન્દ્રિયો - અંતઃકરણના પ્રવાહમાં આપણો ઊર્ધ્વનો માર્ગ મૂકી, અધોમાર્ગ - વિષયના માર્ગ - મનધાર્યું કરવાના માર્ગે ચાલવા માંડીશું. તેથી હંમેશા આ અંગે - ખાસ કરીને સ્ત્રી-પુરુષ મર્યાદા ને મહારાજને ગમતી છે તે અંગે ખૂબ એટલે ખૂબ સાવધાન રહીએ.

૫. <u>ત્રણ વખતનું રોજનું ભજન:</u>

(સવારે ઊઠતાં વેંત, દિવસના ગાળામાં કોઈ એક ફીક્સ ટાઈમે ને રાત્રે સૂતા પહેલાં)

ભજન – આ રસ્તે ચાલવાનું 'ઈંધણ' છે. એ આપણને રોજ-બરોજ શક્તિ (એનર્જી) આપે ને બધાં જ ઉપાયો જ્યારે ફેઈલ નીવડે એ ટાણે ઉપાયરૂપ પણ એ જ બનતું હોય છે. પ.પૂ.કાકાજીએ ના દરેક બાબતે લૌકિક ઉપાયો મૂકી, ભજનનો ઉપાય લેવા જ કહેતાં ને આપણને શીખવવા માટે સતત ભજન કર્યા કરતાં ને કરાવતા આપણે એમને જોયા છે.

વળી, ભજન ભગવત્સ્વરૂપ સંતની સ્મૃતિ સાથે કરીએ એ 'કરામત' છે. માટે ભજન સંતની સ્મૃતિ સાથે કરવું.

બીજું ખાસ, તમોને મારી સાથે હેત છે, તેથી સહજ જ મને સંભારશો. પણ, રખે ભૂલ કરી મને એકલાને સંભારતા. મારી સાથે – કાકાજી કે પપ્પાજી કે સ્વામીજી જેવા ભગવત્સ્વરૂપ સંત – જેઓને આપે જોયા છે, જાણ્યા છે – એમને સાથે રાખજો, રાખજો ને રાખજો.

આમાં, મારું નિર્માનીપણું નથી માનતા, પણ તમારું ભજન અચૂક ભગવાન સાંભળે જ – એની આ ફોર્મ્યુલા છે.

૧૨ જૂન ૨૦૨૪, બુધવાર

– તમારા ગુરુજી

जय स्वामिनारायण!

सभी के शिरछत्र प.पू. प्रमुखस्वामी महाराज ने 13 अगस्त, 2016 शनिवार को, अक्षरधाम तुल्य महातीर्थ सारंगपुर मंदिर में, देह त्याग किया और 17 तारीख बुधवार को मंदिर के संकुल में ही, प.पू. महंतस्वामीजी, पू. डॉक्टरस्वामी एवं वरिष्ठ संतों द्वारा उनकी अंत्येष्ठि की गई, जिसका दर्शन हम सभी ने भारी हृदय और अश्रुभरी आंखों से टी.वी. द्वारा किया।

ऐसी घटनाओं के बारे में सुन कर या देख कर, उनसे जुड़े संस्मरण स्मृतिपट पर सहज ही उभर आते हैं और साथ ही साथ हमारे ऐसे आधार या अवलंबन के टूटने की कल्पना मात्र से ही हमारा समग्र तंत्र एकदम विह्वल हो उठता है।

प.पू. काकाजी स्वधाम पधारे, तब पुराने जोगिओं ने मुझे ऐसी अवस्था में देखा ही है। लेकिन, धीरे-धीरे हमारे अन्य गुणातीत स्वरूपों व आत्मीय मुक्तों के

अपनत्व की उष्मा ने मुझे स्वस्थता दी व चैतन्यस्वरूप से प.पू. काकाजी के सतत सान्निध्य की अनुभूति होते और उन्हें उनके ही ढंग से हमारे काम संपन्न करते देख कर, उनके स्थूलस्वरूप की कमी न खल कर, धीरज रही और उनके पद्चिन्हों पर चलने की – चलते रहने की सूझ भी मिलती रही।

तो, कैसे भी संजोगों में – कैसे भी प्रसंगों में प.पू. काकाजी की कमी कभी भी महसूस न हो व उनका सतत सान्निध्य अनुभव हो, इस हेतु निम्न पाँच मुद्दे पकड़े रखें : **1.** अक्षरपुरुषोत्तम की शुद्ध युगल उपासना। **2.** हमारी आपसी एकता। **3.** समग्र गुणातीत समाज में सर्वदेशीयता से ओत-प्रोत रहना। **4.** हमारा स्वधर्म-हमारी मर्यादा। **5.** प्रतिदिन तीन बार का भजन।

ये पाँच मुद्दे पकड़े रखेंगे, तो मूल अक्षरमूर्ति गुणातीतानंदस्वामी के आशीर्वचन के मुताबिक़, प.पू. काकाजी चले गए या दूर हैं, ऐसा लगेगा ही नहीं।

1. **अक्षरपुरुषोत्तम की शुद्ध युगल उपासना :** पूर्व के बलिष्ठ संस्कार के कारण भगवत्स्वरूप संत ने हमें अपने जोग में लिया और हेतनिष्ठा से हम उनसे जुड़ गए। उस समय एक ऐसा कोई निशान-ध्येय नहीं था कि हमें भगवान भजने हैं-साधने हैं। लेकिन, जैसे-जैसे प्रगट सत्पुरुष की बातें-कथावार्ता सुनी, वैसे-वैसे ध्येय समझ में आता गया-स्पष्ट होता गया।

   एक बात पक्की है कि ब्रह्मभाव से की गई सेवा-भक्ति ही परब्रह्म को – भगवान को पहुँचती है और उसे भगवान स्वीकार करते हैं।

   ब्रह्मभाव में-निर्गुणभाव में स्थित रहने के लिए, प्रगट ब्रह्मस्वरूप संत का संबंध-उनका संग नहीं, 'प्रसंग' अनिवार्य है। इसके सिवा भले ही कितना ही व्रत, तप, तीर्थाटन, दान, योग, यज्ञ जैसे साधन करें, वे हमें 'सात्त्विकभाव' तक ले जाएंगे, लेकिन हमारा जीव **'ब्रह्मरूप'** नहीं होगा।

दूसरी ओर, **प.पू. काकाजी** तो कहते – *'ब्रह्मस्वरूप संत के वचन से तुम ठाकुरजी की घंटी बजाओ, वो तुम आत्मसत्ता रूप-ब्रह्मरूप से वर्ते हो!'* साकार ब्रह्म के संबंध से 'ब्रह्म'-ब्रह्मस्वरूप हुए संतों या जिन्होंने परब्रह्म को - भगवान को सांगोपांग धारण किया हुआ हैं – ऐसे संतो की एक परंपरा भगवान स्वामिनारायण ने मूल अक्षरमूर्ति गुणातीतानंदस्वामी द्वारा अखंड रखी है। अक्षरपुरुषोत्तम की युगल उपासना के मंदिर बना कर, अक्षर और पुरुषोत्तम की मूर्तियाँ प्रतिष्ठित करके, गुरुवर्य शास्त्रीजी महाराज ने यह सत्य व्यापक में मूर्त किया।

तो, अक्लमंद वही है, जो इस सत्य को पकड़ ले।

अतः जिसे भगवान को (परब्रह्म तत्त्व को) अखंड धारना हो - रखना हो, उसे ब्रह्मरूप होने के लिए अनन्यभाव से अक्षरपुरुषोत्तम की उपासना करनी है, है और है – यह बात अब हम सभी के गले उतर गई है!

2. **हमारी आपसी एकता :** पहले कहा जाता था – *'धर्म, ज्ञान, वैराग्य युक्त भक्ति जिसमें हो, वह एकांतिक भक्त है।'*

प.पू. योगीबापा ने सूत्र दिया – *'एकता वही एकांतिकभाव !'*

प.पू. काकाजी ने यह पकड़ा और आदर्श के रूप में, कुटुंबभाव से पू. कांतिकाका के साथ जीवनपर्यंत ऐसी एकता से जीकर, एकांतिकभाव के मार्ग पर चलने का नया व अद्‌भुत मार्ग हमें दे दिया। प.पू. काकाजी के प्रति लगाव के कारण हमने यह बात मानी और हम सब उस मार्ग पर कुटुंबभाव से अग्रसर हुए और ऐसे स्वरूपलक्षी सुहृद्‌भाव से, ऐसी एकता से आंतरिक व बाह्य कोई भी माया बाधारूप नहीं बनी।

मूल अक्षरमूर्ति गुणातीतानंदस्वामी ने जूनागढ़ मंदिर के संतों-सेवकों को आशीर्वाद दिया था – *'तुम सभी साधु, पार्षद, ब्रह्मचारी इसी प्रकार संप रखोगे,*

तो कैसे भी अंतरशत्रु तुम्हें पराभव नहीं करेंगे और यदि इस प्रकार नहीं रहोगे, तो अल्प जैसा दोष भी तुम्हें सत्संग से बाहर निकाल देगा।'

स्वामी के ये आशीर्वचन शाश्वत् हैं।

3. **समग्र गुणातीत समाज में सर्वदेशीयता से ओत-प्रोत रहना :** ब्रह्म के लिए-गुणातीत के लिए कोई मर्यादा नहीं; वो सर्वत्र-सर्वव्यापी है। अब हम यह समझने लगे हैं। सो, उनके संबंध से सुहृद्भाव भी सीमित नहीं रहता। सो, समग्र गुणातीत समाज में, भले ही संजोग और परिस्थिति के कारण हम अलग-अलग रहें, लेकिन ये हमारे और ये दूसरे, ये पसंदीदे और ये नापसंद, ऐसी किसी भी प्रकार की भेददृष्टि के बिना, सर्वदेशीय रवैया रख कर, कुटुंबभाव से सभी को अपना ही मान कर, आत्मबुद्धि व प्रीति से गुणातीत समाज के सभी मुक्तों के साथ ओत-प्रोत हों–तभी हम सच में काकाजी के।

4. **हमारा स्वधर्म-हमारी मर्यादा :** इस मार्ग पर चलते मुक्तों के लिए अपने आश्रम के स्वधर्म की मर्यादा का पालन अत्यंत आवश्यक है। इसके अभाव में इंद्रियों-अंतःकरण के प्रवाह में, उर्ध्व मार्ग से चूक कर, अधो मार्ग पर-विषय के मार्ग पर-मनमानी करने के मार्ग पर बहने लगेंगे। सो, हमेशा इस बारे में और ख़ास तौर पर, महाराज ने जो स्त्री-पुरूष मर्यादा रखी है, उस विषय में अत्यंत सावधान रहें।

5. **प्रतिदिन तीन बार का भजन :** ***(सुबह उठते ही, दिन में किसी भी एक निर्धारित समय और रात को सोने से पहले)***

भजन–इस रास्ते पर चलने का 'फ्यूअल-ईंधन' है। यह हमें रोज़मर्रा की शक्ति (एनर्जी) देता है और जब सभी उपाय फॅइल हो जाएं, तब उपायभूत भी यही होता है। प.पू. काकाजी तो हर प्रसंग पर बौद्धिक उपाय छोड़ कर, भजन का उपाय लेने का आग्रह करते और हमें सिखाने के लिए हमने उन्हें सतत

भजन करते और करवाते हुए देखा है।

भजन भगवत्स्वरूप संत की स्मृति के साथ करें, यह 'करामत' है। सो, संत की स्मृति के साथ भजन करना।

दूसरी ख़ास बात, तुम्हें मेरे साथ लगाव है, तो सहज ही मेरा स्मरण करोगे। लेकिन, भूल कर भी मुझ अकेले की स्मृति नहीं करना। मेरे साथ–**काकाजी या पप्पाजी या स्वामिजी** जैसे भगवत् स्वरूप संत–जिन्हें आपने देखा है, निहारा है–**उन्हें साथ में रखना, रखना और रखना।**

इसमें मेरा निर्मानीभाव नहीं मानना, लेकिन तुम्हारा भजन महाराज अचूक सुनें ही–उसका यह फॉर्म्यूला है।

– *तुम्हारे गुरुजी*

12 जून 2019, बुधवार

इतना तो अचूक कर लेना–

1. सुबह और सायं – दो बार भजन
2. रात को प्रायश्चित्त रूप प्रार्थना
3. किसी का दोष, किसी की क्रिया, किसी का स्वभाव देखे बिना प्रगट का **'नौकार मंत्र'** रट कर साक्षीभाव से सभी क्रियाएँ करना, किन्तु गुण के भाव में स्थित रह कर नहीं।

दिल की सच्चाई और प्रामाणिकता से एक मिनिट भी की गई प्रार्थना पहुँचती है और रमणीय पंचविषयों की तीव्र इच्छा, गफ़लत और अस्मिता को पिघाल ही देती है।

सभी क्रियाएँ 'स्वीच ऑन' करके, प.पू. बापा में से जो आए, वही करेंगे तो ब्राह्मीशक्ति हमारे आगे-पीछे काम करती दिखाई देगी, अनुभव में आएगी और आश्चर्यकारक घटना बनेगी।

– गुरुहरि काकाजी महाराज

गुणातीत समाज की जय

श्री अक्षरपुरुषोत्तम स्वामिनारायण मंदिर

'ताड़देव', काकाजी लेन, स्वामिनारायण मार्ग, अशोक विहार-III,
दिल्ली-110 052 (भारत) दूरभाष: 4709 1280, 4709 1281
E-mail - taaddev@ydsd.org